Shikshan Sanshodhan : Journal of Arts, Humanities and Social Sciences ISSN: 2581-6241 Volume - 3, Issue - 5, Sept-Oct – 2020
Bi-Monthly, Peer-Reviewed, Refereed, Indexed Journal Impact Factor: 3.589
Received on : 25/09/2020 Accepted on : 14/10/2020 Publication Date: 31/10/2020

संत साहित्य और नामदेव की प्रासंगिकता

प्रकाश कुमार पोद्दार
शोधार्थी (हिंदी), गुजरात केन्द्रीय विश्वविद्यालय,
गांधीनगर-382030 (गुजरात)
ई-मेल– prakash.duhindi@gmail.com

सारांश : यदि आधुनिक काल को सिर मानें तो उसका पैर मध्यकाल में जमा हुआ दिखाई देता है। हिंदी साहित्य के मध्यकाल में संतों द्वारा स्वर्णखचित मानव मूल्यों का जो संचित भंडार है उससे हमें वर्तमान को सिंचित करने की जरूरत है। वर्तमान में उसके सिंचन से ही मनसा, वाचा कर्मणा के एकत्व बोध के साथ मनुष्य का चरित्र निर्माण कर एक समतामूलक एवं समरस समाज का निर्माण करना संभव है। हमारी जो सहयोग एवं स्वीकार्यता की संस्कृति रही है उसके माध्यम से आज वैविध्यपूर्ण माहौल में मनुष्य से लेकर राष्ट्र कल्याण और फिर वसुधैव कुटुम्बकम तक के उदत्त भावनाओं तक का समाहार है जिसके तहत वर्तमान की गतिशीलता के साथ मानव सभ्यता का स्वर्णिम भविष्य बनाया जा सकता है।

मुख्य शब्द : आधुनिकता ,मध्यकाल ,मानव मूल्य ,विश्व-संस्कृति, लोकमंगल, विराट समन्वयशीलता ,संत काव्य परंपरा ,एकेश्वर वाद ,ब्रह्मवाद, पैगम्बरी खुदावाद ,समतामूलक समाज ,समरस समाज ,बाह्याडम्बर ,सत्संगति ,चरित्र-निर्माण ,शील, शक्ति और सौन्दर्य, स्वीकार्यता व सहयोग की भावना ,मनसा, वाचा, कर्मणा

भूमिका :

विद्वानों ने कहा है कि आज आधुनिकता की जड़ें यदि देखनी हो तो वह हमें मध्यकाल में मिलती है। यदि आधुनिक काल को सिर मानें तो उसका पैर मध्यकाल में जमा हुआ दिखाई देता है। आज वैश्वीकरण के इस दौर में जब मानव सभ्यता अपने विकास के चरम पर स्थित है तो मानव मूल्य खतरे में है और अब तो उसके अस्तित्व का ही संकट खड़ा हो गया है। विकास के मूल में एक बात तो स्पष्ट हो गयी है कि हम जितना मस्तिष्क की उड़ान आकाश में भरते हैं उतने ही हमारा पाताल लोक का मार्ग भी प्रशस्त हो जाता है। अर्थात, हम धरती पर रहने के लायक ही नहीं रह पाते हैं। हमारी प्रकृति जो हमारे लिए ही नहीं वरन् सभी प्राणी जगत् के लिए वरदान है, आज वही हमारे लिए त्रासदी का सबक बनकर तांडव कर रही है। कारण हम सभी जानते हैं। किसी भी पौधे को जब खाद-पानी मिलना बंद हो जाता है तो उसके पत्ते सूखने लगते हैं। देखते ही देखते उसका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता है। उसे बचाने के लिए यदि उसे समय से वह संजीवनी प्राप्त हो जाता है तो हरा-भरा होकर फलाच्छादित हो जाता है। आज हमारा वर्तमान भी उसी प्रकार से सूखने लगा है। यदि हमें इसे फिर से जीवित करना है तो हमें उस स्वर्ण युग में जाना होगा जिसे भारतवर्ष का नवजागरण भी कहा जाता है। जी हाँ हमें हिंदी साहित्य के मध्यकाल में संतों द्वारा स्वर्णखचित मानव मूल्यों का जो संचित भंडार है उससे हमें वर्तमान को सिंचित करने की जरूरत है।

मध्यकाल की संत काव्य परंपरा अपने मूल्य परक दृष्टि से विश्व-संस्कृति, लोकमंगल, तथा विराट समन्वयशीलता के कारण सम्पूर्ण संसार को प्रभावित किया। इसमें सम्पूर्ण जगत को युग-युगांतर तक प्रेरित एवं प्रभावित करने की क्षमता है। वह वास्तव में मनुष्यता का पथ-प्रदर्शक है। समन्वय की ऐसी दुर्लभ अनुकृति जहाँ साहित्य और संस्कृति, लोक और वेद, इतिहास और पुराण, दर्शन एवं भक्ति, योग और रहस्य, ज्ञान और प्रेम आदि के विराट रूप के दर्शन हों वह अन्यत्र दिखाई नहीं देती है। संतों के साहित्य में ज्ञान, विज्ञान, दर्शन (जीव, जगत, ब्रह्म और माया) के वृहत्तर सन्दर्भ को काव्य की संपत्ति बनाकर मनुष्यता का मार्ग प्रशस्त किया गया है। यही कारण है कि आज भी हमें अपने कई समस्याओं के निदान उस संत साहित्य में दिखाई देते हैं। वे साहित्य आज भी हमारे लिए उतना ही प्रासंगिक हैं जितना कि वह अपने समय में रहा है।

आज के व्यस्तता, तनाव और घुटन के माहौल में यदि अपने युवा पीढ़ी को बचाना है तो उसे भारतीय सभ्यता संस्कृति और उसकी परम्पराओं से अवगत कराना होगा। ताकि वे इन भारतीय संस्कारों से संस्कारित हो पाश्चात्य संस्कृति के काल के ग्रास से बचकर अपने जिंदगी में संतुलन बना सके। ऐसे संस्कारों के लिए मध्यकालीन संत काव्य परम्पराओं की भूमिका अहम् हो जाती है। क्योंकि इन संतो का उद्देश्य अपने तत्कालीन समय में भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों की स्थापना करना था जो मूल्य आज भी हम सभी के लिए अनुकरणीय है। यही हमारे भटकते युवाओं का मार्गदर्शन करने में सक्षम है। इन संतों में संत ज्ञानदेव, नामदेव, कबीर, दादू, रैदास आदि थे। इनकी तपोनिष्ठ वाणी प्रकाशस्तंभ की भांति आज भी हमारे समाज, शिक्षा, दर्शन, व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण, देश निर्माण हेतु मार्ग को प्रकाशित करने में सक्षम है।

भक्तिकाल एवं नामदेव:

विद्वानों ने मध्यकाल की शुरूआत 14वीं सदी से माना है। मध्यकाल में भक्ति काव्य धारा के अंतर्गत संत काव्य परंपरा की शुरूआत इसी सदी के प्रारंभ से होता है। यही वह समय भी है जब संत नामदेव (1270 ई. - 1350 ई.) ने भक्ति का प्रचार कर एक नए युग का सूत्रपात किया। इनका जन्म महाराष्ट्र के सतारा जिले में कृष्णा नदी के किनारे बसे नरसी बामणि गाँव(वर्तमान में हैदराबाद के अंतर्गत) में हुआ था। इनके पिता का नाम दमासेठ और माता का नाम गोणा बाई था। पत्नी राजाबाई थी। इनके चार पुत्र नारायण, विट्ठल, महादेव और गोविन्द थे और एक पुत्री बिम्बाबाई थी। इनका परिवार भगवान विट्ठल का परम भक्त था।

संत नामदेव ने जिस भक्ति मार्ग की नींव डाली कमोबेस उनकी बनायी भावभूमि पर ही आगे चलकर कबीर, दादू, नानक, आदि संतों ने संत काव्य-परंपरा को संवर्धित व परिवर्धित किया। महाराष्ट्र दक्षिण और उत्तर भारत को जोड़ने वाली कड़ी है। संत बहिणाबाई के अनुसार ज्ञानेश्वर ने महाराष्ट्र में वारकरी संत साहित्य की नींव डाली। इनमें नामदेव, एकनाथ, तुकाराम और समर्थ रामदास व अन्य संतों के साहित्य का समावेश था। ज्ञानदेव की प्रेरणा से नामदेव ने बिसोवा खेचर(नाथपंथी कनफटे योगी) से दीक्षा ली। क्योंकि ज्ञानदेव उन्हें बार-बार यह समझाते थे कि 'बिनु गुरू होई न ज्ञान'। इस सम्बन्ध में नामदेव जी कहते हैं "मन मेरी सुई, तन मेरा धागा। खेचर जी के चरण पर, नाम सिम्पी लागा।"[1] कहा जाता है कि संत बिसोवा खेचर से दीक्षा लेने के बाद नामदेव सगुणोपासना से निकलकर निर्गुण की उपासना में लग गए। इसके साथ ही वे नाथपंथ की सधुक्खडी भाषा में काव्यरचना करने लगे जबकि पहले वे सगुणोंपासना के समय ब्रज या परंपरागत काव्य भाषा का प्रयोग करते थे। इन्होनें महाराष्ट्र के साथ पुरे उत्तर भारत का भ्रमण कर समतामूलक समाज एवं भक्ति का पाठ अपने 'अभंग'(भक्ति-गीत) के माध्यम से दिया। सिक्खों के धार्मिक पुस्तक 'गुरु ग्रन्थ साहिब' में नामदेव जी के 61 पद, 3 श्लोक, 18 रागों में संग्रहित हैं। इनके इन पदों के आधार पर डॉ. शिवप्रसाद सिंह ने कहा है : "नामदेव की भाषा में पिंगल अपभ्रंश के कुछ परवर्ती रूप, पुराणी राजस्थानी तथा कई प्रकार की जनपदीय बोलियों का मिश्रण पाया जाता है। किन्तु भावपूर्ण सहज भक्ति की रचनाएं, ब्रजभाषा में दिखाई देती है।"[2]

नामदेव पेशे से दर्जी और बिठोवा के भजन कीर्तन में मस्त रहते थे। इन्होनें मराठी भाषा में 'अभंगों' की रचना की। इसके अलावा अन्य भाषाओं में भी। इनकी रचनाओं में निर्गुण एवं सगुन दोनों के रूप दिखाई देते हैं। आचार्य शुक्ल नामदेव जी के महत्त्व के विषय में कहते हैं : "भक्ति के आन्दोलन की जो लहर दक्षिण से आई उसी ने उत्तर भारत की परिस्थिति के अनुकूल हिन्दू-मुसलमान दोनों के लिए एक सामान्य भक्ति मार्ग की भावना कुछ लोगों में जगायी। हृदय पक्ष शून्य सामान्य अन्तःसाधना का मार्ग निकालने का प्रयत्न नाथपंथी कर चुके थे।...महाराष्ट्र देश के प्रसिद्ध भक्त नामदेव (सं. 1328-1408) ने हिन्दू मुसलमान दोनों के लिए भक्तिमार्ग का भी आभास दिया।"[3] इससे भक्तिमार्ग की जिस एकेश्वर वाद का स्वरुप स्थित हुआ उससे ब्रह्मवाद तथा पैगम्बरी खुदावाद का मार्ग तैयार हुआ।

इनकी भक्ति दुःख और करुणा से उपजी भक्तों के आर्त पुकार की भक्ति है। इनकी भागवत भक्ति की प्रशंसा करते हुए संत ज्ञानदेव कहते हैं: 'भागवत भक्त पहले भी हुए और भी होंगे किन्तु नामदेव के कवित्व में अद्भुत निरुपम शक्ति है। जिन्हें दूरदृष्टि हो वे ही इस बात की अनुभूति कर सकते हैं।' उस समय तत्कालीन समाज में जात-पात का बहुत बोलबाला था। मध्यकाल के प्रायः सभी कवियों ने इस पर जोरदार प्रहार किया है। इसी सन्दर्भ में नामदेव भी कहते हैं: "जाति-पांति पूछे नहीं कोई, हरी को भजे सो हरी का होई।।"[4] इसके माध्यम से समतामूलक समाज की जो परिकल्पना संत काव्यों में देखने को मिलती है वह आज के समाज के लिए भी उतना ही वांछनीय है। जहाँ एक समुदाय आरक्षण का लाभ पीढ़ी-दर-पीढ़ी लेकर उसे अपना मौलिक अधिकार साबित करने में लगे हों वहीं दूसरी ओर किसी के द्वारा उसका नाम लेने पर वे अपमानित महसूस करते हों। इससे समतामूलक समाज की स्थापना नहीं हो सकती है। जबतक कि हम इस जातीय मानसिकता को पूरी तरह से उन्मूलित न कर दें।

संत नामदेव जी को विट्ठल की भक्ति विरासत में मिली थी। उनका सम्पूर्ण जीवन मानव कल्याण के लिए ही समर्पित था। उनकी वाणी की सरलता सबके हृदय को बांधे रखती थी। बाह्याडम्बर उन्हें पसंद नहीं था। उनकी मूर्ति पूजा, कर्मकांड, जात-पात आदि विषयों पर खंडन के कारण विद्वान उसे कबीर के अग्रज मानते हैं। भक्त कवियों ने अपने काव्य रचनाओं के माध्यम से ऐसे काव्यों की रचनाएँ की हैं जिससे पाठकों को संसारिकता और भौतिकता के विभिन्न अभिलाषाओं से ऊपर उठकर आध्यात्मिक प्रेम और तृप्ति की अनुभूति हुई है। संत रविदास नामदेव की भक्ति के विषय में कहते हैं: "नामदेव प्रीति लगी हरि सेती, लोक छीपा कहे बुलाई। खत्री ब्राह्मण पीठी दे छोड़े हरि, नामदेव लीआ मुखि लाइ। (अर्थात नामदेव की हरि से प्रीति ऐसी लगी कि उसे लोग छीपा कहते थे उसे हरि ने खत्री और ब्राह्मण जैसी सवर्ण जातियों को छोड़कर स्वीकार कर लिया।)"[5]

संत नामदेव की रचना 'अभंग' में से कुछ पंक्तियों पर विचार करना आवश्यक है ताकि उनके द्वारा निर्धारित मूल्यों से हम आज के परिदृश्य को देखने में सक्षम हो सकें। जैसा कि संत काव्यों में सत्संगति पर विशेष बल दिया गया है। संत नामदेव इस सम्बन्ध में कहते हैं: "साध संगति मिलि षैलीला, पांचू प्रबल पेलीला।।"[6] जीवन में यदि अच्छा दोस्त नहीं मिला तो जीवन नरक बन जाता है। खल, कामी मित्र के चक्कर में व्यक्ति अपने जान तक गँवा देता है।

फिर वे आगे कहते हैं :

"संत की छाया संत की माया। संत संगति मिलि गोविन्द पाया।
असंत संगति नामा कबहूँ न जाई । संत संगति मैं रह्यो समाई।।"[7]

संत नामदेव हमें कुसंगति से बचने के लिए भी कहते हैं। युवाओं को मुर्ख, दम्भी, कामी, मिथ्याभाषी लोगों से बचना चाहिए। "कुसंगत दुःख अनंत है, सब दोषण को द्वार।"[8]

संत नामदेव कहते हैं कि ह्रदय में जब प्रेम रूपी झरना प्रवाहित होने लगती है तो हमें धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की भी चाहत नहीं रहती। प्रेम रूपी भक्ति सदैव फलदायी होती है। वे कहते हैं: "अर्थ धरम काम की कहा मोषी मांगे, दास नामदेव प्रेम भगति अंतरी जो जागे।।"[9] इस सम्बन्ध में कबीर दास भी कहते हैं 'ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।'

संतों ने सृष्टि के सभी घटों में ब्रह्म का दर्शन किया है। उनके राम तो हर जगह विद्यमान हैं। इसलिए नामदेव जी कहते हैं "थावर जंगम कीट पतंगा, सब घटि राम समाना।।"[10] नाथपंथ के प्रसिद्ध योगी गोरक्षनाथ कहते हैं 'जोई जोई पिंडे, सोई सोई ब्रह्मांडे।'

आज भी समाज में बड़ी-बड़ी डिंग हांकने वालों की कमी नहीं है। वे अपनी तर्कों से राई को पर्वत और पर्वत को राई दिखाने की क्षमता रखते हैं। ऐसे पंडित दिमागी कसरत में निपुण होते हैं जो शास्त्र को केवल पढ़कर चिल्लाते हैं। उसे समझकर जीवन में उतारना तो उसके लिए बहुत दूर की बात होती है। इसलिए नामदेव जी कहते हैं "पंडित होई सो बेद बषानै, मूरिष नामदेव राम ही जानै।।"[11] इसी सन्दर्भ में कबीर दास जी भी कहते हैं 'पोथी पढ़ी पढ़ी जग मुआ, पंडित भया न कोय। ढाई आखड़ प्रेम का पढ़े सो पंडित होय।'

इसी प्रेम रूपी तत्व का चिंतन जब नामदेव जी करते हैं तो वे संसार के राजपाट को छोड़कर अर्थात, अपनी संपत्ति गरीबों को दान देकर भिखारी बनना पसंद करते हैं। वे कहते हैं कि "जब हम ह्रिदै प्रीति बिचारी, रजबल छांडि भए भिषारी।।"[12]

संत नामदेव पत्थरों को पूजने में विश्वास नहीं करते थे। इसलिए जो लोग ऐसा करते हैं उससे कहते हैं कि इससे बाहर के अंतर्दृष्टिविहीन लोग मान लेंगें कि आप भगवन् की पूजा करते हैं परन्तु, पूजा का फल अर्थात ईश्वर प्राप्ति नहीं हो सकती है। वे कहते हैं "पाषंड भगति राम नहीं रीझै, बाहरी अँधा लोक पतीजै।।"[13] इस सम्बन्ध में कबीर दास जी भी कहते हैं कि 'कांकड़ पाथर जोरी के मस्जिद लियो बनाय, ता चढ़ी मुल्ला बांग दे क्या बहिरा हुआ खुदाय।'

हमारे यहाँ व्रत एवं उपासना का विशेष महत्त्व रहा है। आज बड़े-बड़े वैज्ञानिक यह मानते हैं कि निर्जला एकादशी से केंसर जैसे रोगों से भी लड़ने के लिए शरीर में रोगप्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है। इससे शरीर स्वस्थ बना रहता है और सभी कार्यों की सिद्धि आसान हो जाती है। वे कहते हैं: "एकादशी व्रत करै, काहे कौ तीरथ जाई।।"[14]

आज के आधुनिक महाकवि जयशंकर प्रसाद 'कामायनी' में लिखते हैं 'ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है, इच्छा क्यों पूरी हो मन की। एक दूसरे से न मिल सके यह विडंबना है जीवन की।' जीवन में संतुलन बहुत आवश्यक है। आज युवा पीढ़ी तो दूर, बड़े-बड़े ढोंगी बाबा, मुल्ला, नेता आदि मंच से लोगों को उपदेश और भाषण देते हैं और उसकी चारित्रिक हकीकत बहुत मुश्किल से पकड़ में आने पर हम उसे सजा दे पाते हैं। परन्तु ऐसे गिने-चुने को सजा देने पर भी समाज को विशेष लाभ नहीं मिल पाता है जबतक कि हम समाजशास्त्रीय विश्लेषण कर इसका हल न निकालें। इसके लिए व्यक्ति निर्माण व चरित्र निर्माण की आवश्यकता है। जिसके अंतर्गत व्यक्ति जो सोचता हो वही बोलता हो और वही करता हो। इसे ही ध्यान में रखकर संत नामदेव कहते हैं कि इस कलियुग में केवल भगवान् का नाम ही सबका उद्धार कर सकता है वह भी तब जब वह उसे सम्पूर्ण समर्पण के साथ ले। वे कहते हैं "मनसा बाचा कर्मना, कलि केवल नाम अधार।।"[15]

निष्कर्ष:

निष्कर्षतः मध्यकालीन संत काव्यों में ऐसी विशेषता है कि वह मनुष्य से लेकर राष्ट्र कल्याण और फिर वसुधैव कुटुम्बकम तक को साध लेता है। इसे देखना इसलिए भी जरूरी है क्योंकि आज मनुष्य अपने स्वार्थ साधने व एक देश दूसरे देशों पर चढ़ाई करने के लिए परमाणु बमों व अत्याधुनिक हथियारों के निर्माण में लगा हुआ है। इसलिए हमें अपने अतीत को देखने की जरूरत है। फिर हमें भक्तिकाल की याद आती है। भक्तिकाल में जितने भी निर्गुण संत कवि हुए वे सभी कर्मठ थे और जीवन में आस्था रखते थे। अधिकांश अपने आजीविका के साथ गृहस्थी में रत रहकर भक्ति करते हुए वे सामाजिक रूढियों को मिटाने का प्रयास किया और राष्ट्र की उन्नति के मार्ग को प्रशस्त किया। उनके भक्ति की संस्कृति का स्वरूप

अंतर्राष्ट्रीय था। वे हमेशा चरित्र निर्माण पर बल देते थे। एक चरित्रवान व्यक्तित्व से ही स्वस्थ समाज का निर्माण संभव है। यही स्वस्थ व आत्मनिर्भर समाज से ही राष्ट्र का उत्तम निर्माण हो सकता है।

मध्यकालीन काव्यों में शील, शक्ति और सौन्दर्य की परिकल्पना का उद्देश्य भी यही है जिससे सोयी हुई मानव प्रजाति अपने मानवीय मूल्यों को पहचानकर सामर्थ्यवान महसूस करे। हीनता व दीनता की भावना से बाहर निकलकर अपने नैतिक आचरण से सिंह के समान दहारने की क्षमता का विकास कर सके। यही आज की आवश्यकता है। हम विदेशी वस्तुओं के उपभोग से अपनी प्रसिद्धि परांगमुखता का शिकार हो अपने दुश्मन से लड़ने का सामर्थ्य खो रहे हैं। विदेशी संस्कृतियों के लोक लुभावन विज्ञापन में आकर हमारा समाज अपने गौरवशाली अतीत को भूलकर विषय वासनाओं में लिपटता जा रहा है। यदि हमें इस मोह से निकलना है तो हमें संतो के साहित्य में जिसमें चारित्रिक बल पैदा करने की संजीवनी है उसे आत्मसात करना होगा। सादा जीवन उच्च विचार के साथ आत्मनिर्भर बनना होगा। समाज में जो संस्थागत व व्यवस्थागत कमियां हैं उसे स्वीकार्यता व सहयोग की भावना के साथ दूर करते हुए एक समतामूलक समरस समाज का निर्माण करना होगा और यह तभी संभव है जब हम स्वयं उन श्रेष्ट मानव मूल्यों को मनसा, वाचा कर्मणा के साथ जीवन जीकर अपने नजदीकियों के लिए उसकी प्रेरणा के स्रोत बनेंगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

[1] रानी, डॉ. आभा, भक्ति काव्य में निर्गुणमार्गी संत कवि : वर्तमान सन्दर्भ में..., सनराइज प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या 6
[2] सिंह, विजय पाल, हिंदी अनुसंधान, क्षेत्रीय शोध, पृष्ठ संख्या 155, लोकभारती प्रकाशन, दिल्ली
[3] रानी, डॉ. आभा, भक्ति काव्य में निर्गुणमार्गी संत कवि : वर्तमान सन्दर्भ में..., सनराइज प्रकाशन, नयी दिल्ली, पृष्ठ संख्या 6
[4] वही, पृष्ठ संख्या 6
[5] बनर्जी, डॉ. शुभंकर, आलेख- निर्गुण संतों की वैश्विक कर्मठ संस्कृति एवं प्रेम भक्ति, गगनांचल, नवम्बर-दिसम्बर, 2014, पृष्ठ 11
[6] हनुमान प्रासादिक भजन मंडल, वासलई, वसई, अभंगवाणी, राग टोड, छंद संख्या 30
http://abhangwaani.blogspot.com/2012/03/namdev-hindi-rachana.html
[7] वही, छंद संख्या 31
[8] श्री दयालुदास जी महाराज की अनुभव वाणी (भाग-1), कुसंगत कौ अंग, छंद संख्या 1, पृष्ठ संख्या 302
[9] हनुमान प्रासादिक भजन मंडल, वासलई, वसई, अभंगवाणी, राग टोड, छंद संख्या 3
[10] वही, छंद संख्या 6
[11] वही, छंद संख्या 10
[12] वही, छंद संख्या 11
[13] वही, छंद संख्या 20
[14] वही, छंद संख्या 27
[15] वही, छंद संख्या 50